DSSSB TGT & PGT
दिल्ली अधीनस्थ सेवा चयन बोर्ड
ROJGAR
ANKIT
Part-B
SCHOLAR BATCH
संस्कृत
साहित्य
रघुवंशम्
Part -2
LIVE
05-07-2024 05:00 PM

शैशवेऽभ्यस्तविद्यानां यौवने विषयैषिणाम्।
वार्धके मुनिवृत्तीनां योगेनान्ते तनुत्यजाम् । ।8।।

प्रसंग - प्रस्तुत पद्य में महाकवि कालिदास ने रघुवंशी राजाओं के शैशव, यौवन और वृद्धावस्था के कार्यों का उल्लेख करते हुये उनकी विशेषतायें बतायी हैं।

अन्वयः शैशवे, अभ्यस्तविद्यानां, यौवने, विषयैषिणां, वार्धके, मुनिवृत्तीनाम्, अन्ते, योगेन, तनुत्यजां, 'रघूणामन्वयं वक्ष्ये'।

शब्दार्थ

शैशवे = बाल्यकाल में,

अभ्यस्तविद्यानां = समस्त विद्याओं का अभ्यास करने वाले,

यौवने = युवावस्था में,

विषयैषिणाम् = गृहस्थ में रहकर विषयों का भोग करने वाले,

वार्धके = वृद्धावस्था में, मुनिवृत्तीनां ऋषियों के समान आचार व्यवहार करने वाले,

अन्ते = मृत्युकाल में,

योगेन = चित्तवृत्तियों के निरोध से अर्थात् वानप्रस्थ आश्रम में परमात्मा को स्मरण करते हुए,

तनुत्यजां = शरीर को छोड़ने वाले।

अनुवाद - बाल्यकाल में विद्या का अभ्यास करने वाले, युवावस्था में गृहस्थाश्रम के विषयों का भोग करने वाले, वृद्धावस्था में ऋषियों के समान व्यवहार करने वाले, अर्थात् (अरण्य में रहकर परमात्मा को ध्यान करने वाले) मरण काल में भगवान् को स्मरण करते हुए शरीर को छोड़ने वाले रघुवंश का वर्णन मैं कालिदास करूँगा।

सन्धि-

योगेनान्ते - योगेन अन्ते (दीर्घ सन्धि)

समास-

अभ्यस्तविद्यानाम् - अभ्यस्ताः विद्या यैः ते अभ्यस्तविद्याः तेषाम् अभ्यस्तविद्यानाम् (बहुव्रीहि समास)

मुनिवृत्तीनाम् - मुनेः वृत्तिरिव वृत्तिः येषाम् ते मुनिवृत्तयः तेषाम् मुनिवृत्तीनाम् (बहुव्रीहि समास)

तनुत्यजाम् - तनुम् त्यजन्ति इति तनुत्यजः तेषाम् तनुत्यजाम् (उपपद समास)

विशेष - भारतीय संस्कृति में जीवन को चार आश्रमों में बांटा गया है ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास। रघुवंश के राजा शैशव काल में ब्रह्मचर्य का पालन करते हुये विद्या का अभ्यास करते थे।

यौवन काल में गृहस्थ आश्रम का पालन करते हुये विषय आदि का उपभोग करते थे तथा वृद्धावस्था में वानप्रस्थ धारण कर मुनियों के समान आचरण करते हुये अन्ततः संन्यास आश्रम में चित्तवृत्तियों का निरोध करके तथा परमात्मा का ध्यान करते हुये शरीर का त्याग करते थे। इस प्रकार उनका समग्र जीवन नियम और संयम से परिपूर्ण था।

रघूणामन्वयं वक्ष्ये तनुवाग्विभवोऽपि सन् ।
तद्गुणैः कर्णमागत्य चापलाय प्रचोदितः ।।9।।

प्रसंग - कालिदास ऊपर चार श्लोकों में रघुवंश में उत्पन्न राजाओं की विशेषताओं का उल्लेख करने के अनन्तर उनका वर्णन करने की प्रतिज्ञा करते हैं।

अन्वयः - सः, अहम् तनुवाग्विभवोऽपि, सन्, तद्गुणैः, कर्णमागत्य, चापलाय, प्रचोदितः, सन्, 'रघूणामन्वयं वक्ष्ये'।

शब्दार्थ

तनुवाग्विभवोऽपि = वाणी के सामर्थ्य से रहित, सन् = होने पर भी, तद्गुणैः = रघुवंशी राजाओं के गुणों के द्वारा, कर्णमागत्य = कान में आकर, चापलाय = चपलता के लिए अर्थात् बिना विचार किये कार्य करने के लिए, प्रचोदितः = प्रेरित किया, रघूणाम् = रघुवंशियों के, अन्वयम् = वंश को, वक्ष्ये कहूँगा।

सन्धि

तद्गुणैः - तत् + गुणैः (जश्त्व सन्धि)

समास-

तनुवाग्विभवः - वाचां विभवः वाग्विभवः तनुः वाग्विभवः यस्य सः तनुवाग्विभवः । (बहुव्रीहि समास)

तद्गुणैः - तेषां गुणाः तद्गुणाः तैः तद्गुणैः। (तत्पुरुष समास)

विशेष - कालिदास ने पाँचवें श्लोक से आठवें श्लोक तक कुल चार श्लोकों में, रघुवंशी राजाओं के सोलह गुणों का वर्णन किया है। जो निम्नलिखित हैं -

1. जन्म से ही पवित्रता, 2. फलप्राप्तिपर्यन्त उद्यमशीलता, 3. समुद्रपर्यन्त पृथ्वी का स्वामित्व, 4. स्वर्गपर्यन्त रथगामित्व, 5. शास्त्रोक्तविधि से यज्ञ सम्पादन, 6. याचकों को आवश्यकतानुसार दान देना, 7. अपराध के अनुसार दण्डविधान, 8. समयानुसार कार्य सम्पादन, 9. त्याग के लिये धन संचय, 10. सत्य के लिये मितभाषिता,

11. यश के लिये विजयेच्छा, 12. सन्तति के लिये गृहमेधिता, 13. शैशव काल में विद्या का अभ्यास, 14. यौवन में विषय का उपभोग, 15. वृद्धावस्था में मुनिवृत्ति का धारण तथा 16. संन्यास आश्रम योगबल से देह का त्याग।

कालिदास का कथन है कि यद्यपि मेरी वाणी में उतना सामर्थ्य नहीं है तथापि इन राजाओं के गुण श्रवण ने मुझे इनका गुणगान करने के लिये रघुवंश महाकाव्य की रचनारूप चपलता करने के लिये प्रेरित किया है। कवि ने अपने राजाओं के इन गुणों का निर्देश करके अपनी कृति की उत्कृष्टता का संकेत किया है।

विद्वानों से रघुवंशी राजाओं के चरित्र को सुनने का आग्रह

तं सन्तः श्रोतुमर्हन्ति सदसद्व्यक्तिहेतवः ।
हेम्नः संलक्ष्यते ह्यग्नौ विशुद्धिः श्यामिकाऽपि वा।।10।।

प्रसंग - महाकवि कालिदास ने इस श्लोक में विद्वानों से रघुवंशी राजाओं के चरित्र को सुनने का आग्रह किया है तथा यह कहा है कि सोने की परीक्षा अग्नि में ही हुआ करती है।

अन्वयः - सदसद्व्यक्तिहेतवः सन्तः तं श्रोतुम् अर्हन्ति, हि हेम्नः विशुद्धिः श्यामिका अपि वा अग्नौ संलक्ष्यते ।

शब्दार्थ

सदसद्व्यक्तिहेतव: = सत्य और असत्य को जानने वाले, सन्त: = विद्वान्, तं = उस रघुवंश को, श्रोतुम् = सुनने के लिए, अर्हन्ति = योग्य है, हि क्योंकि, हेम्न: = सोने की, विशुद्धि: = शुद्धता, श्यामिका = दोषयुक्तता, अपि = भी, अग्नौ = अग्नि में ही, संलक्ष्यते = प्रतीत होती है।

अनुवाद - उचित और अनुचित को जानने वाले विद्वान् ही इस रघुवंश महाकाव्य को सुनने के योग्य हैं, क्योंकि स्वर्ण की शुद्धता अथवा दोष युक्तता का परीक्षण अग्नि में डालने से ही होता है।

सन्धि-

ह्यग्नौ - हि + अग्नौ (यण सन्धि)

समास-

सदसद्व्यक्तिहेतवः - सत् च असत् सदसती सदसतोः व्यक्तिः सदसद्व्यक्तिः सदसद्व्यक्तेः हेतवः सदसद्व्यक्तिहेतवः (तत्पुरुष समास)

विशेष - उपर्युक्त श्लोक के माध्यम से महाकवि कालिदास ने विद्वानों को अपने काव्य के श्रवण के लिये आमन्त्रित किया है। उनको अग्नि तथा अपनी कृति को स्वर्ण माना है। स्वर्ण का परीक्षण अग्नि में ही हो सकता है।

बोध प्रश्न

1) निम्नलिखित प्रश्नों में सही उत्तर का चयन कीजिये-

(i) रघुवंशम् का मंगलाचरण है-

(क) नमस्कारात्मक

(ख) वस्तुनिर्देशात्मक

(ग) आशीर्वादात्मक

(घ) इनमें से कोई नहीं

(ii) रघुवंश महाकाव्य का अंगीरस है-

(क) श्रृंगार (ख) वीर

(ग) हास्य (घ) करुण

(iii) रघु ने दान दिया-

(क) परशुराम (ख) याज्ञवल्क्य

(ग) कौत्स (घ) विश्वामित्र

शब्दावली

सम्पृक्तौ = नित्य सम्बद्ध

वागर्थप्रतिपत्तये = शब्दार्थ के ज्ञान के लिए

उडुपेन = छोटी नाव से

तितीर्षु: = तैरने की इच्छा वाला

उपहास्यताम् = उपहास की पात्रता को

कवियश:प्रार्थी = कवि के यश को प्राप्त करने के इच्छुक

प्रांशुलभ्ये = उन्नत पुरुष द्वारा प्राप्त करने योग्य

पूर्वसूरिभिः = मेरे पूर्ववर्ती कवि वाल्मीकि

वज्रसमुत्कीर्ण = वज द्वारा छिद्र किये गये

आसमुद्रक्षितीशानाम् = समुद्रपर्यन्त पृथ्वी के स्वामी

यथाविधिहुताग्नीनाम् = विधि के अनुसार अग्नि में हवन करने वाले

मितभाषिणाम् = कम बोलने वाले

गृहमेधिनाम् = विवाह करने वाले

विजिगीषूणाम् = जीतने के इच्छा वाले

वार्धके = वृद्धावस्था में

तनुत्यजां = शरीर को छोड़ने वाले

तनुवाग्विभवोऽपि = वाणी के सामर्थ्य से रहित

प्रचोदितः = प्रेरित किया

हेम्नः = सोने की

अर्हन्ति = योग्य है

संलक्ष्यते = प्रतीत होती है

काव्यांश की व्याख्या

मनु का परिचय

वैवस्वतो मनुर्नाम माननीयो मनीषिणाम् ।
आसीन्महीक्षितामाद्यः प्रणवश्छन्दसामिव ॥11 ॥

प्रसंग - प्रस्तुत श्लोक में महाकवि कालिदास ने महाराज मनु का परिचय देते हुये उन्हें राजाओं में प्रथम तथा वेदों में ओंकार की तरह बताया है।

अन्वयः मनीषिणां माननीयः वैवस्वतः नाम मनुः छन्दसां प्रणवः इव महीक्षिताम् आद्यः आसीत्।

शब्दार्थ

मनीषिणाम् = विद्वानों के, **माननीयः**= पूज्य, छन्दसाम् वेदों के, **प्रणवः इव** = ओंकार के समान, **महीक्षिताम्** = पृथ्वी के राजाओं में, **आद्यः** = सर्वप्रथम, **वैवस्वतः नाम** = वैवस्वत नाम के सूर्य के पुत्र, **मनुः** = प्रथम मनु, **आसीत्** = थे।

अनुवाद - जिस प्रकार वेदों में सर्वप्रथम ओंकार होता है। उसी प्रकार राजाओं में सर्वप्रथम विद्वानों के पूजनीय सूर्य के पुत्र वैवस्वत नाम के मनु हुए।

रघुवंशम्

सन्धि -

आसीन्महीक्षिताम् - आसीत् + महीक्षिताम् (अनुनासिक सन्धि)

प्रणवश्छन्दसामिव - प्रणवः + छन्दसामिव (श्चुत्व सन्धि)

समास

मनीषिणाम् - मनसः इषिणः मनीषिणः तेषाम् मनीषिणाम् (तत्पुरुष समास)

महीक्षिताम् - महीं क्षियन्ति इति महीक्षितः तेषाम् महीक्षिताम् (उपपद समास)

विशेष - महाकवि कालिदास दस श्लोकों में रघुवंश के राजाओं का गुणानुवर्णन करने के अनन्तर इस श्लोक से उनकी वंश परम्परा का वर्णन प्रारम्भ करते हैं। महाराज मनु साक्षात् सूर्य के पुत्र थे। सूर्य का एक नाम विवस्वान् है।

विवस्वान् का पुत्र होने के कारण मनु को वैवस्वत कहा गया। इनकी चर्चा अनेक पुराणों में भी हुई है। कालिदास ने उन्हें ओंकार के समान आदरणीय और सर्वव्यापक बताया है।

दिलीप का जन्म

तदन्वये शुद्धिमति प्रसूतः शुद्धिमत्तरः ।
दिलीप इति राजेन्दुरिन्दुः क्षीरनिधाविव ।।12 ॥

क्षीरनिधौ + इव

प्रसंग - प्रस्तुत श्लोक में कालिदास ने महाराज मनु के पुत्र दिलीप के जन्म का वर्णन किया है।

अन्वयः - शुद्धिमति तदन्वये शुद्धिमत्तरः दिलीप इति राजेन्दुः क्षीरनिधौ इन्दुः इव प्रसूतः ।

शब्दार्थ –

शुद्धिमति = शुद्धता से युक्त, तदन्वये उस मनु के वंश में, **शुद्धिमत्तरः** = अत्यन्त शुद्ध चरित्र वाले, **दिलीप इति** = दिलीप नामक, **राजेन्दुः** = राजाओं में श्रेष्ठ, **क्षीरनिधौ** = क्षीरसागर में, **इन्दुः इव** = चन्द्रमा के समान, **प्रसूतः** = उत्पन्न हुआ।

अनुवाद - सूर्य के पुत्र उस मनु के अत्यन्त शुद्ध वंश में क्षीरसागर में चन्द्रमा के समान राजाओं में श्रेष्ठ परम पवित्र दिलीप नामक राजा हुआ।

सन्धि

राजेन्दुरिन्दुः - राजेन्दुः + इन्दुः (विसर्ग सन्धि)

क्षीरनिधाविव - क्षीरनिधौ + इव (अयादि सन्धि)

समास

तदन्वये - तस्य अन्वयः तदन्वयः, तस्मिन् तदन्वये (तत्पुरुष समास)

राजेन्दुः - राजा इन्दुः इव राजेन्दुः (मयूरव्यंसकादि समास)

क्षीरनिधौ - क्षीरस्य निधिः क्षीरनिधिः, तस्मिन् (तत्पुरुष समास)

विशेष - रघुवंश महाकाव्य में चर्चित राजाओं में महाराज दिलीप का स्थान सर्वोच्च है। उन्होंने प्रजा के पालन तथा धर्म की रक्षा के लिये सदैव कार्य किया। उनकी पत्नी का नाम सुदक्षिणा था तथा उनके रघु नामक अत्यन्त प्रतापी पुत्र उत्पन्न हुआ। जिसके नाम पर इस महाकाव्य का नाम रघुवंश रखा गया है।

दिलीप का स्वरूप

व्यूढोरस्को वृषस्कन्धः शालप्रांशुर्महाभुजः ।
आत्मकर्मक्षमं देहं क्षात्रो धर्म इवाश्रितः ।। 13 ||

प्रसंग - प्रस्तुत श्लोक में महाकवि कालिदास ने मनु के वंश में जन्मे राजा दिलीप के स्वरूप का वर्णन किया है।

अन्वयः - व्यूढोरस्कः वृषस्कन्धः शालप्रांशुः महाभुजः (सः) आत्मकर्मक्षमं देहम् आश्रितः क्षात्रः धर्म इव (स्थितः)।

शब्दार्थ

व्यूढोरस्कः = विशाल वक्षस्थल वाले, वृषस्कन्धः = वृषभ के स्कन्ध के समान स्कन्ध वाले, शालप्रांशुः = शाल वृक्ष के समान उन्नत, महाभुजः = बड़ी भुजाओं वाले, आत्मकर्मक्षमम् = अपने कार्यों को करने में समर्थ, देहम् = शरीर को, आश्रितः = धारण किये हुए, क्षात्रः = क्षत्रियसम्बन्धी, धर्मः = पराक्रम के, इव = समान।

अनुवाद - महाराज दिलीप का वक्षस्थल अत्यधिक चौड़ा था। उनके स्कन्ध वृषभ के स्कन्ध के समान ऊँचे और मजबूत थे। वे शालवृक्ष के समान उन्नत थे तथा उनकी भुजायें अत्यन्त दीर्घ थीं। वे अपने कार्यों के सम्पादन में समर्थ शरीर को धारण करते थे। जिससे ऐसा प्रतीत होता था मानो राजा दिलीप मूर्तिमान् क्षत्रिय धर्म हैं।

सन्धि - इवाश्रितः इव + आश्रितः (दीर्घ सन्धि)

समास -

व्यूढोरस्कः - व्यूढम् उरः यस्य सः व्यूढोरस्कः (बहुव्रीहि समास)

वृषस्कन्धः - वृषस्य स्कन्ध इव स्कन्धः यस्य सः वृषस्कन्धः (बहुव्रीहि समास)

शालप्रांशुः - शाल इव प्रांशुः शालप्रांशुः (कर्मधारय समास)

महाभुजः महान्तौ भुजौ यस्य सः (बहुव्रीहि समास)

आत्मकर्मक्षमम् - आत्मनः कर्म इति आत्मकर्म, आत्मकर्मणि क्षमम्, आत्मकर्मक्षमम् (तत्पुरुष समास)

विशेष - शास्त्रों में किसी भी महापुरुष के स्कन्ध का वर्णन वृषभ के स्कन्ध की उपमा देकर किया जाता है। वृषभ अपने स्कन्ध पर समस्त भार को धारण कर लेता है। राजा दिलीप का स्कन्ध वृषभ के स्कन्ध के समान है। अत: वह समस्त प्रजा के भार को धारण करने में समर्थ हैं। इसी प्रकार उनकी ऊँचाई की तुलना शाल वृक्ष से की गई है। भुजाओं को जानुपर्यन्त लम्बमान् निरूपित किया गया है। यह शास्त्रीय स्वरूप उनकी वीरता तथा प्रजाजनों को धारण करने की क्षमता को द्योतित करता है।

सर्वातिरिक्तसारेण सर्वतेजोऽभिभाविना ।
स्थितः सर्वोन्नतेनोर्वी क्रान्त्वा मेरुरिवात्मना । ।14 ॥

प्रसंग - प्रस्तुत श्लोक में कालिदास ने राजा दिलीप की सर्वव्यापकता का वर्णन किया है।

अन्वयः - सर्वातिरिक्तसारेण सर्वतेजोऽभिभाविना सर्वोन्नतेन आत्मना मेरुः इव उर्वी क्रान्त्वा स्थितः ।

शब्दार्थ

सर्वातिरिक्तसारेण = सभी प्राणियों से अधिक बल वाले, सर्वतेजोभिभाविना = सभी लोगों को अपने तेज से तिरस्कृत करने वाले, सर्वोन्नतेन = सबसे ऊँचे, आत्मना = अपने शरीर से, मेरुः इव = सुमेरु पर्वत के समान, ऊर्वीम् = पृथ्वी को, क्रान्त्वा = व्याप्तकर, स्थितः = विद्यमान है।

अनुवाद - जिस प्रकार सुमेरु पर्वत ने अपनी दृढ़ता, कान्ति तथा ऊँचाई से संसार के सभी दृढ़, कान्तियुक्त तथा ऊँचे पदार्थों को तिरस्कृत करके अपने विस्तार से सम्पूर्ण पृथ्वी को व्याप्त कर लिया है। उसी प्रकार राजा दिलीप ने अपने पराक्रम, तेज और विशाल व्यापक शरीर से सबको तिरस्कृत करते हुये समस्त पृथ्वी मण्डल को अपने अधीन कर लिया था।

सन्धि

सर्वोन्नतेनोर्वीम् - सर्वोन्नतेन + ऊर्वीम् (गुण सन्धि)

मेरुरिव - मेरुः + इव (विसर्ग सन्धि)

इवात्मना - इव + आत्मना (दीर्घ सन्धि)

समास -

सर्वातिरिक्तसारेण - सर्वेभ्यः अतिरिक्तः सारः यस्य सः सर्वातिरिक्तसारः तेन सर्वातिरिक्तसारेण, (बहुव्रीहि समास)

सर्वतेजोभिभाविना - सर्वान् तेजसा अभिभवतीति इति सर्वतेजोऽभिभावी, तेन सर्वतेजोऽभिभाविना (तत्पुरुष समास)

सर्वोन्नतेन - सर्वेभ्य: उन्नत: सर्वोन्नत: तेन सर्वोन्नतेन

(तत्पुरुष समास)

विशेष - यहाँ राजा दिलीप के पराक्रम और प्रभाव को सुमेरु पर्वत के समान बताया गया है। सुमेरु पर्वत अपने गुणों के कारण समस्त पदार्थों को तिरस्कृत करके समग्र पृथ्वी में अपने एकाधिपत्य को स्थापित किये हुये है। उसी प्रकार राजा दिलीप ने अपने गुणों के कारण अन्य समस्त राजाओं को तिरस्कृत करके समग्र पृथ्वी में अपना एकाधिपत्य या चक्रवर्तित्व स्थापित किया।

आकारसदृशप्रज्ञः प्रज्ञया सदृशागमः ।
आगमैः सदृशारम्भः आरम्भसदृशोदयः ।।15।।

प्रसंग - प्रस्तुत श्लोक में महाकवि कालिदास ने महाराज दिलीप के आकार आदि का वर्णन किया है।

अन्वयः (स दिलीपः) आकारसदृशप्रज्ञः प्रज्ञया सदृशागमः आगमैः सदृशारम्भः आरम्भसदृशोदयः (आसीत्)।

शब्दार्थ

आकारसदृशप्रज्ञः = आकृति के अनुरूप बुद्धि वाले, **प्रज्ञया** = बुद्धि के समान, **सदृशागम** = शास्त्र को अभ्यास करने वाले, **आगमैः** = शास्त्रों के अनुसार से, **सदृशारम्भः** = आरम्भ करने वाले, **आरम्भसदृशोदयः** = आरम्भ के अनुसार फल को प्राप्त करने वाले।

अनुवाद - महाराज दिलीप जिस प्रकार विशालकाय और सुन्दर आकार वाले थे वैसी ही आकार के समान उनकी बुद्धि थी। जैसी तीक्ष्ण उनकी बुद्धि थी वैसे ही वे शास्त्राभ्यास करने वाले थे। वे जैसा शास्त्राभ्यास करते थे या शास्त्रों से सीखते थे वैसे ही शास्त्रानुकूल कार्य सम्पन्न करते थे। वे जैसे शास्त्रानुकूल कार्य सम्पन्न करते थे उसी प्रकार की सफलता प्राप्त करते थे।

सन्धि -

सदृशागमः - सदृश + आगमः (दीर्घ सन्धि)

सदृशारम्भः - सदृश आरम्भः (दीर्घ सन्धि)

सदृशोदयः - सदृश उदयः (गुण सन्धि)

समास -

आकारसदृशप्रज्ञः - आकारेण सदृशी प्रज्ञा यस्य सः आकारसदृशप्रज्ञः (बहुव्रीहि समास)

सदृशागमः - सदृशः आगमः यस्य सः, सदृशागमः (बहुव्रीहि समास)

आरम्भसदृशोदयः - आरभ्यते इति आरम्भः, आरम्भेण सदृशः उदयः यस्य सः आरम्भसदृशोदयः (बहुव्रीहि समास)

विशेष - कालिदास ने इस पद्य में राजा दिलीप के आकार, बुद्धि, शास्त्राभ्यास, आरम्भ तथा फल प्राप्ति में एकरूपता दिखाई है।

दिलीप के गुण

भीमकान्तैर्नृपगुणैः स बभूवोपजीविनाम् ।
अघृष्यश्चाभिगम्यश्च यादोरत्नैरिवार्णवः ॥ 116 ॥

प्रसंग - प्रस्तुत श्लोक में कालिदास ने महाराज दिलीप के भयंकर और कोमल कोमल गुणों गुणों का समन्वय स्थापित किया है।

अन्वयः - भीमकान्तैः नृपगुणैः च स उपजीविनां यादोरत्नैः अर्णव इव अधृष्यः अभिगम्यः च बभूव।

शब्दार्थ

भीमकान्तैः = भयंकर और सुन्दर, **नृपगुणैः** = राजाओं के लिये अपेक्षित गुणों से, **सः** = वह राजा दिलीप, **उपजीविनाम्** = आश्रित लोगों के लिये, **यादोरत्नैः** = जलजन्तु और रत्नों से, **अर्णवः इव** = समुद्र के समान, **अधृष्यः** = अभिभव के अयोग्य, **अभिगम्यश्च** = आश्रयदाता, **बभूव** = हुए।

अनुवाद - राजा दिलीप तेज और प्रताप आदि भयंकर तथा दया-दाक्षिण्य आदि मनोहर दोनों प्रकार के राजगुणों को धारण करते थे। अतः राजा दिलीप आश्रित जनों के लिये उसी प्रकार अधृष्य आश्रयदाता थे जिस प्रकार मगरमच्छ आदि जलजन्तुओं और विभिन्न प्रकार के रत्नों के कारण समुद्र अधृष्य आश्रयस्थली बना रहता है। अर्थात् मगरमच्छ आदि से डरकर लोग समुद्र से दूर भी भागते हैं तथा रत्नों को प्राप्त करने के लिये उसके पास भी आते हैं।

सन्धि – भीमकान्तैर्नृपगुणै - भीमकान्तैः + नृपगुणैः (विसर्ग सन्धि)

बभूवोपजीविनाम् - बभूव + उपजीविनाम् (गुण सन्धि)

अधृष्यश्च - अधृष्यः + च (श्चुत्व सन्धि)

रघुवंशम्

अभिगम्यश्च - अभिगम्य: + च (श्चुत्व सन्धि)

चाभिगम्य: - च + अभिगम्य: (दीर्घ सन्धि)

यादोरत्नैरिवार्णव: - यादोरत्नै: + इवार्णव: (विसर्ग सन्धि)

इवार्णव: - इव + अर्णव: (दीर्घ सन्धि)

समास-

भीमकान्तैः - भीमाश्च कान्ताश्च भीमकान्ताः, तैः भीमकान्तैः (द्वन्द्व समास)

नृपगुणैः - नृपाणाम् गुणाः तैः नृपगुणैः (तत्पुरुष समास)

उपजीविनाम् - उपजीवन्ति इति उपजीविनः तेषाम् उपजीविनाम् (उपपद समास)

यादोरत्नैः - यादांसि च रत्नानि च यादोरत्नानि तैः यादोरत्नैः (द्वन्द्व समास)

विशेष - महाकवि कालिदास ने राजा दिलीप की कठोरता और कोमलता का समन्वय करते हुये उन्हें कभी तिरस्कृत न किये जाने योग्य निरूपित किया है।